Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 GISRRJ | Volume 5 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

18वीं शताब्दी में मुस्लिम समाज सुधारक के रूप में शाहवली उल्ला का योगदान

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी
प्रोफेसर, शोध निर्देशक,
मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास
विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज।

मोहम्मद शकीम
शोधार्थी,
मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास
विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज।

Article Info
Volume 5, Issue 1
Page Number : 123-127

Publication Issue :
January-February-2022

Article History
Accepted : 01 Feb 2022
Published : 10 Feb 2022

शोध सारांश– सूफीवाद के प्रति शाहवली उल्लाह का व्यवहार सार्वभौमिक था। हालांकि उन्होंने नक्शबन्दी सम्प्रदाय की दीक्षा प्राप्त की थी किन्तु उन्होंने अपने समय के चारो प्रमुख सूफी सम्प्रदायों से प्रेरणा प्राप्त की। वास्तव में नवदीक्षितो को अपनी शिष्य मण्डली में शामिल करते समय वह चारो मतों के प्रमुख शेखो का नाम लेते थे ताकि नवदीक्षितों को उनकी आध्यात्मिक कृपा प्राप्त हो सके। गोर परस्ती (संतो की कब्र की पूजा) के प्रति उनका दृष्टिकोण उसी प्रकार न्याय संगत था उन्होंने मृत संतों से आर्थिक मदद माँगने की प्रथा की निन्दा की किन्तु उनके मकबरे पर जाने पर रोक नहीं लगाई। उनका विश्वास था कि मदीना में पैगम्बर मुहम्मद के मकबरे पर जाने से आत्मिक शान्ति मिलती है।

मुख्य शब्द– मुस्लिम, समाज, शाहवली उल्ला, सार्वभौमिक, शान्ति, सम्प्रदाय, सांस्कृतिक।

1707ई0 में औरंगजेब की मृत्यु के बाद जो भारत की राजनीतिक परिस्थिति थी उसमें बड़ी तेजी से परिवर्तन आया और मुग़ल साम्राज्य पतन की ओर अग्रसर हुआ।[1] लेकिन एक बात यहाँ ये ध्यान देने योग्य है हम ये नहीं कह सकते कि औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुग़ल साम्राज्य का एकाएक पतन हो गया बल्कि ये कहना सही रहेगा कि पतन की प्रक्रिया आरम्भ हुई। मुग़लों की जो शिक्षा व्यवस्था थी, उसकी सांस्कृतिक गतिविधियाँ थी जिसके अन्तर्गत उनके द्वारा बनायी गयी इमारतें जो आज भी भारत ही नहीं अपितु पूरे विश्व को अपनी नजरों से चकाचौंध कर रही हैं।[2]

जहाँ तक शिक्षा व्यवस्था की बात है इस्लाम के उदय से ही पैगम्बर मोहम्मद साहब ने शिक्षा की ओर जोर दिया गारे हिरा में ज्ञान प्राप्ति के बाद जिस ओर सबसे ज्यादा ध्यान दिया गया वह थी इल्म (शिक्षा)। यहाँ तक कि पैगम्बर मुहम्मद साहब ने शिक्षा की महत्ता को समझा और कहा कि ''एक शहीद के खून से भी पवित्र तालिब इल्म (जो शिक्षा ग्रहण करता है) के कलम की स्याही है।'' एक बात यहाँ स्पष्ट है कि इस्लाम में शिक्षा की बड़ी महत्ता है इसी के अन्तर्गत

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

सुल्तनत काल में सुल्तानों ने तथा मुग़लकाल में बादशाहों ने इस ओर ध्यान दिया और समय–समय पर मकतब एवं मदरसों की व्यवस्था की जिसमें बच्चे इल्म (शिक्षा) हासिल कर सकें।[3] इसी प्रक्रिया में जब 18वीं शताब्दी में जहाँ भारत में मुग़ल साम्राज्य का पतन हो रहा था वहीं दूसरी ओर उस्मानिया साम्राज्य या आटोमन साम्राज्य का पतन हो रहा था इनके पतन के कारणों में से एक कारण ये भी माना गया कि जो शासक थे नीतियाँ बनाते समय कुरॉन व हदीस की बातों की अवहेलना कर रहे थे या यूँ कहें कि जो शासन व्यवस्था थी कुरॉन व हदीस के अनुसार नहीं थी जिससे स्थिति बद से बदतर हो गई। ये जो स्थिति बद से बदतर हो गई थी उसको सुधारने का बीड़ा उठाया शाहवली उल्ला मुहद्दिस देहल्वी ने।[4]

यदि हम शाहवली उल्ला की बात करें तो निश्चित तौर पर ये कहा जा सकता है 18वीं शताब्दी में जिस तेजी से मुग़ल साम्राज्य का पतन हुआ उसमें फैली अराजकता, निराशा और अन्धकार में पूरी मुस्लिम कौम डूबी हुई थी उसके पास मुक्ति का कोई रास्ता नहीं था ऐसे दौर में एक नई रोशनी और नयी आवाज के साथ शाहवली उल्लाह का उदय हुआ उनकी अपील किसी मुक्ति से कम नहीं थी सम्भवता उस दौर को रोशन करने वाले, एक विश्वास और उम्मीद जगाने वाले वे अकेले नायक थे जिनकी वकत किसी फरिश्ते से कम नहीं थी[5] इसलिए शाहवली उल्लाह को मुस्लिम नवजागरण का जनक कहा जाय या पहला महानायक माना जाय तो इसमें कोई हर्ज नहीं। वे न केवल धार्मिक सुधारक के तौर पर उभरते हैं बल्कि तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियों में भी हस्तक्षेप करते दिखायी पड़ते हैं वे न केवल तत्कालीन मुग़ल बादशाहों की फिजूल खर्ची की आलोचना करते हैं अपितु बादशाहों द्वारा राज्य के प्रति जिम्मेदारियों के उल्लंघन की भी कठोर निन्दा करते हैं ऐसी स्थिति में वे स्वयं को एक समाज सुधारक एवं धार्मिक सुधारक के तौर पर पेश करते हैं[6]

शाहवली उल्ला का जन्म 18वीं शताब्दी के प्रारम्भ में फुलत गाँव जो कि अब उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जिले में 1114 हिजरी है 1703ई0 में हुआ।[7] महज सात साल की उम्र में कुरॉन को हिफ्ज (याद) कर लिया। इसके तुरन्त बाद उन्होंने अरबी और फारसी अक्षरो में महारत हासिल की। सोलह वर्ष की उम्र तक उन्होंने हनफी कानून, धर्मशास्त्र, ज्यामिति, अंकगणित और तर्कशास्त्र के मानक पाठ्यक्रम को भी पूरा कर लिया। इनके पिता शाह अब्दुर्रहीम जो कि दिल्ली के मदरसा–ए–रहीमिया के संस्थापक थे[8] वह कानून की संहिता (फतवा–ए–आलमगीरी) के संकलन के लिए औरंगजेब द्वारा नियुक्त समिति पर थे। शाहवली उल्ला ने अपने पिता द्वारा स्थापित मदरसे में ही शिक्षा ग्रहण की। महज 17 वर्ष की अवस्था में ही इनके पिता का देहान्त हो गया। 1730ई0 में शाहवली उल्लाह हज करने गये 14 महीने तक वहाँ रहे और वहाँ पर धर्म से सम्बन्धित शिक्षा ग्रहण की तदुपरान्त 1732ई0 में वह पुनः दिल्ली लौट आये और अपने पिता द्वारा स्थापित मदरसे में ही शिक्षण कार्य प्रारम्भ किया। धीरे–धीरे इनके विद्यार्थियों की संख्या बढ़ती गयी तो मदरसे में जगह कम पड़ गयी। उस समय बादशाह मोहम्मद शाह ने दिल्ली में ही एक हवेली इनकी खिदमत में पेश की शाहवली उल्लाह ने इस हवेली को भी मदरसे से जोड़ दिया।[9]

शाहवली उल्ला के पिता की मृत्यु के बाद उनके मना करने के बावजूद मदरसे के तमाम नामी मोलवियों ने दबाव बनाकर उनको ही मदरसे का प्रधान बना दिया। अध्ययन और साधना की निरन्तरता ने उनके बौद्धिक और आध्यात्मिक आकाश को लगातार विस्तार दिया। अब वे दर्शन और धर्म के साथ–साथ सामाजिक और राजनीतिक विषयों का भी अध्ययन करने लगे। इसका एक असर ये हुआ कि वे अपने समय–सरोकारों के प्रति भी सचेत होते गये। उनके विचारों में समकालीनता शामिल हो गयी। उनको महसूस हुआ कि व्यक्ति की निजी उन्नति से बड़ी बात सामाजिक उन्नति है और वह पूरी तरह राजनीतिक स्थिति पर ही निर्भर करती है।[10]

शिवशंकर मेनन ने शेख अहमद सरहिन्दी से शाहवली उल्ला को हिगारते हुए बताया है कि नक्शबंदी परम्परा में कुछ लोग ऐसे थे जो अकबर की धार्मिक नीतियों और वुजूदी विचारों के

विरोध को उचित नहीं मानते थे इस तरह उसकी दो शाखाएँ बन गयी। एक वुजूदी विचारों का समर्थन करने वाली और दूसरी वहदत–उश–शुहूद स्थिति में शाहवली उल्ल स्वयं को एक समाज सुधारक एवं धार्मिक सुधारक के तौर पे पेश करते हैं[11] इन्होंने तत्कालीन राजनैतिक एवं सामाजिक पतन के कारणों की जाँच करने की कोशिश की। इनका मानना था कि मुसलमानों के पतन का मुख्य कारण इस्लामिक शिक्षाओं से विमुख होना तथा विभिन्न प्रकार की बुराइयों का मुस्लिम समाज में प्रवेश हो जाना था जैसे– फिजूल खर्ची, कुरॉन हदीस की मान्यताओं को न मानना इत्यादि।[12]

शाहवली का मानना था कि, उनकी शिक्षाओं पर मुस्लिम वर्ग अमल करते हैं तो मुसलमान पुनः उसी प्रतिष्ठा एवं पद को दोबारा प्राप्त कर सकते हैं शाहवली उल्लाह को उचित रूप में भारत के मध्यकालीन और आधुनिक इस्लाम के बीच का सेतु कहा जाता है उन्होंने हिन्दुस्तान में मुसलमानों की राजनीतिक शक्ति का तेजी से पतन होते हुए और साथी मुसलमानों और हिन्दुओं के जीवन और सम्पत्ति का मराठो, जाटो और सिखो के हाथों विनाश होते देखा। उन्होंने भारत में अभिजात्य मुसलमानों को पत्र लिखकर उनसे आपसी कटुता भुलाकर भारत में मुस्लिम राजनीतिक शक्ति को पुनः स्थापित करने के लिए एक साथ मिलकर काम करने का अनुरोध किया।[13] उन्हें अपने समय के मुसलमान समाज के धार्मिक और नैतिक जीवन में फैले भ्रष्टाचार एवं लापरवाही की प्रवृत्ति की जानकारी थी जिससे वह दुःखी रहते थे उनके समय में अभिजात्य मुसलमानों के धार्मिक और बौद्धिक वर्ग में फैली नैतिक भ्रष्टता का उनकी आत्मा पर गहरा दबाव था जिसे शायद आम मुसलमान महसूस नहीं करता था[14] सब कुछ चुपचाप घटते देखता रहता था और जिसे अपनी आत्मा को टटोलने या ऐतिहासिक तर्क उठाने में कोई रुचि नहीं थी वह छोटे–मोटे सामाजिक लाभ मे लिप्त रहने के कारण मुस्लिम समाज में पनप रही सड़ांध के लिए स्वयं उन्हीं को जिम्मेदार मानते थे। उन्हें खेद था कि मुसलमानों ने ईश्वर के आदेशों और पैगम्बर मोहम्मद की शिक्षाओं को भुला दिया था इसलिए अब उन पर ईश्वर की कृपा नहीं थी[15] और इसलिए उनकी राजनीतिक सत्ता का विघटन होना अपरिहार्य था उन्हें विश्वास था कि मुसलमानों को पथभ्रष्ट करने वाली नई धार्मिक कुरीतियों (बिदअत) और नैतिक पतन से बचाने का केवल यही एक तरीका था कि उन्हें कुरॉन और हदीस (पैगम्बरी परम्पराएँ) का सच्चा अर्थ बताया जाय केवल इसे ही ध्यान में रखकर उन्होंने कुरॉन का फारसी अनुवाद किया था (1737–38ई0 में) भारत के मुसलमान बुद्धिजीवियों को ईश्वर के सन्देश का जनता की भाषा में अनुवाद पसन्द नहीं आया।[16] इसके लिए शाहवली उल्लाह पर अपशब्दों की बौछार की गई और उनके अनुवाद फतह–उल–रहमान जो आधुनिक विद्वानों की राय में एक ऐसा ग्रन्थ है जो इस्लाम के इतिहास में उन्हें निश्चित रूप से एक उच्च स्थान दिलाने के लिए पर्याप्त है को खतरनाक धार्मिक कुरीति कहकर उसकी भर्त्सना की गई। उलेमा की निन्दा की परवाह न करते हुए शाहवली उल्लाह फतह–उल–रहमान को अपने मदरसे के पाठ्यक्रम में शामिल किया और कुरॉन का अनुवाद करने में आने वाली कठिनाइयों पर एक शोध ग्रन्थ तथा तफ्सीर (कुरॉन की व्याख्या) की तकनीकि पर एक पुस्तक लिखी। उसके बाद उन्होंने कुरॉन पर दो शोध निबन्ध लिखें।[17]

हदीस की शिक्षाओं को लोकप्रिय बनाने के शाहवली उल्लाह के प्रयास उनके द्वारा कुरॉन को सामान्य, पढ़े–लिखे लोगों तक पहुँचाने के लिए किए गए प्रयासों से कम महत्वपूर्ण और कम सराहनीय नहीं थे। इन्होंने इमाम मालिक की परम्पराओं के प्रसिद्ध संकलन, अलमुअत्ता पर फारसी और अरबी दोनों भाषाओं में पाण्डित्यपूर्ण भाष्य लिखे उनके दो लोकप्रिय भाष्य चिहल हदीस और अन नवादिर मिन अल हदीस सम्भवता इन भाष्यों से भी अधिक लोकप्रिय और प्रशंसनीय थे।[18] उनके अति महत्वपूर्ण ग्रन्थ हुज्जत अल्लाह अल बालिगा को भी हदीस विज्ञान के विकास में एक महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है इस पुस्तक की रचना से यह सिद्ध करना था कि एक मुसलमान का आदर्श जीवन केवल कुरॉन और हदीस की शिक्षाओं के अनुरूप ही जिया जा सकता है। क्योंकि ''शरीयत के प्रत्येक आदेश के पीछे न केवल एक विशेष प्रयोजन है बल्कि उसको तर्क की कसौटी पर कसा जा सकता है।'' पैगम्बरी परम्पराओं और कुरॉन के पदो से लिए गए संकेतो

और उद्धरणों से परिपूर्ण है इस पुस्तक में पैगम्बरी परम्पराओं पर मौजूद ग्रन्थों का शरीयत के अध्ययन में उनके महत्व के अनुसार चार श्रेणियों में तथ्यात्मक वर्गीकरण किया गया है।[19]

शाहवली उल्लाह जीवन भर मुसलमानों के सुधार के लिए प्रतिबद्ध रहे। अपनी अन्तिम वसीयत में अपने साथी मुसलमानों का ध्यान समाज में फैली सामाजिक बुराइयों की ओर दिलाया उनका कहना था कि विधवाओं के पुनर्विवाह पर रोक लगाना विवाह और मृत्यु के साथ जुड़ी खर्चीली रस्मे निभाना, जिनका खर्च उठा पाने में अधिकांश मुसलमान असमर्थ थे और महर में बहुत अधिक रकम तय करना इत्यादि जैसी प्रचलित परम्परायें अरब देश में मौजूद नहीं थी यह रीति रिवाज गैर मुसलमान रीति रिवाजों से जुड़े हुए थे और इन्हें छोड़ने की जरूरत थी।[20]

सर मुहम्मद इकबाल के अनुसार शाहवली उल्लाह पहले भारतीय मुसलमान थे ''जिन्होंने स्वयं में एक नये जोश की भावना महसूस की।'' वास्तव में अपने समय के सभी धार्मिक और आध्यात्मिक विवादों पर उनके खुले शान्त और सहिष्णु विचारों ने अनेक क्षेत्रों में एक नई विचारधारा को प्रेरित किया। जिसकी भारतीय इस्लाम के इतिहास में कोई बराबरी नहीं थी। अधिकांश भारतीय मुसलमानों के समान वह धर्मशास्त्र के हनफी मत के अनुयायी थे। किन्तु अन्य तीनों मतो का भी वह उतना ही सम्मान करते थे शिया सुन्नी विवाद के हल के लिए उन्होंने सन्तुलित और समझदारीपूर्ण रुख अपनाया। हालांकि उन्होंने प्रथम तीन खलीफाओं पर शियाओं के अली की श्रेष्ठता के दावे को स्वीकार नहीं किया, किन्तु उन्होंने यह कहकर अली के प्रति अपने स्नेह को दर्शाया कि ''यदि मुझे मेरी सोच और प्रवृत्ति पर छोड़ दिया जाता तो मैं अली को श्रेष्ठ कहता।'' उन्होंने शियाओं को धर्म विरोधी घोषित करने से इंकार कर दिया और मुस्लिम एकता के लिए शिया–सुन्नी मतभेदों को कम करने का कठोर प्रयास किया।[21]

इस प्रकार सूफीवाद के प्रति शाहवली उल्लाह का व्यवहार सार्वभौमिक था। हालांकि उन्होंने नक्शबन्दी सम्प्रदाय की दीक्षा प्राप्त की थी किन्तु उन्होंने अपने समय के चारो प्रमुख सूफी सम्प्रदायों से प्रेरणा प्राप्त की। वास्तव में नवदीक्षितो को अपनी शिष्य मण्डली में शामिल करते समय वह चारो मतों के प्रमुख शेखो का नाम लेते थे ताकि नवदीक्षितों को उनकी आध्यात्मिक कृपा प्राप्त हो सके। गोर परस्ती (संतो की कब्र की पूजा) के प्रति उनका दृष्टिकोण उसी प्रकार न्याय संगत था उन्होंने मृत संतों से आर्थिक मदद माँगने की प्रथा की निन्दा की किन्तु उनके मकबरे पर जाने पर रोक नहीं लगाई। उनका विश्वास था कि मदीना में पैगम्बर मुहम्मद के मकबरे पर जाने से आत्मिक शान्ति मिलती है। उन्होंने लोगो को मृत संतो से आध्यात्मिक शान्ति या सहायता माँगने से नहीं रोका। आवश्यकता पड़ने पर वह स्वयं भी मदद की गुहार करने अपने पिता की कब्र पर जाते थे। उन्होंने वहदतुल वजूद और वहदत–उश–शुहूद के सिद्धान्तों के बीच सामन्जस्य स्थापित करने का भी प्रयास किया। अपने शोध ग्रन्थ रिसाला–ए–वहदत अल वजूद व अल शहूद में उन्होंने सुझाव दिया कि दोनों सिद्धान्त दो मार्गों को दर्शाते हैं जो एक ही लक्ष्य की ओर ले जाते हैं।[22]

1763ई0 में शाहवली उल्लाह की मृत्यु हो गई[23] किन्तु उनकी मृत्यु से आशा और जीवन की वह ज्योति बुझ नहीं पाई जिसे उनके विचारों ने भारतीय मुसलमान समुदाय के क्षीण होते ढाँचे में सुलगाया था उनके पुत्र और उत्तराधिकारी शाह अब्दुल अजीज (1746–1824) ने अपने साथी मुसलमानों का नेतृत्व करना जारी रखा।[24] शाह अब्दुल अजीज की विद्वता, धर्मपरायणता और समुदाय की दैनिक समस्याओं के प्रति उनके निष्पक्ष रुख ने, उन्हें अत्यन्त महत्वपूर्ण और शक्ति एवं सच्चाई का दूत बना दिया। ज्ञान और सत्यता की खोज करने वाले देश के कोने–कोने से और यहाँ तक कि विदेशों से भी लोग दिल्ली में उनके मदरसे में आने लगे। एक आधुनिक विद्वान ने लिखा है कि देश में शायद ही ऐसा कोई आलिम होगा, ''जिसने अपनी आध्यात्मिक या शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शाह अब्दुल अजीज के प्रति निष्ठा न दर्शाई हो।''[25] तथापि 19वीं शताब्दी के आरम्भ में उत्तर भारत के मुसलमानों का नेतृत्व कथित रूप से शाह के समर्थन और प्रोत्साहन से बुद्धिजीवियों और सुधारकों की नई पीढ़ी के हाथों

में चला गया जिन्होंने शाह अब्दुल अजीज या उनके पिता की तुलना में अधिक आक्रामक रुख अपनाया और अधिक कठोर उपायों का सहारा लिया।[26]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. चन्द्र सतीश मध्यकालीन भारत सल्तनतकाल से मुग़लकाल तक (1726–1761) जवाहर पब्लिसर्श एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली 2011, पृष्ठ 354.
2. अहमद लईक, मुग़लकालीन भारत, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद 2005, पृष्ठ 1–207.
3. अहमद लईक, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद 2009, पृष्ठ 49–153.
4. डॉ0 मुहम्मद गतरीफ शहजाद नदवी, आलमे इस्लाम के चन्द मशाकिर, रकबर बुक सर्विस, नई दिल्ली 2014, पृष्ठ 36–37.
5. वही, पृष्ठ 36–38.
6. वही, पृष्ठ 37.
7. शिशिर कर्मेन्दु, भारतीय मुसलमान इतिहास का सन्दर्भ भाग–1 भारतीय ज्ञानपीठ 2017, पृष्ठ 375.
8. वही, पृष्ठ 376.
9. वही, पृष्ठ 375–377.
10. कलाम ताबिर, रिलीजियस ट्रेडिशन एण्ड कल्चर इन एट्टीन्थ सेंचुरी नार्थ इंडिया, प्राइमस बुक, दिल्ली, पृष्ठ 31, 32.
11. पूर्वोक्त, भारतीय मुसलमान इतिहास का सन्दर्भ भाग–1, पृष्ठ 376.
12. वही, पृष्ठ 376.
13. फारूकी, एन0आर0 सूफीवाद कुछ महत्वपूर्ण लेख ओरियंट ब्लैकस्वान, हैदराबाद, पृष्ठ 149.
14. वही, पृष्ठ 149.
15. वही, पृष्ठ 149, 150.
16. पूर्वोक्त, रिलीजियस ट्रेडिशन एण्ड कल्चर इन एट्टीन्थ सेंचुरी, नार्थ इंडिया, पृष्ठ 23–26.
17. वही, पृष्ठ 23–28.
18. वही, पृष्ठ 28.
19. पूर्वोक्त, सूफीवाद कुछ महत्वपूर्ण लेख, पृष्ठ 150.
20. सैय्यद अहमद खान आसास्सन्स नाहिद एन0डी0 भाग–4 असलम सिद्दीकी द्वारा उद्धृत : सैय्यद अहमद शाहिद इस्लामिक कल्चर खण्ड 29, 1945, पृष्ठ 2, 125.
21. पूर्वोक्त, सूफीवाद कुछ महत्वपूर्ण लेख पृष्ठ 150, 151.
22. वही, पृष्ठ 151.
23. वही, पृष्ठ 151.
24. वही, पृष्ठ 152.
25. पूर्वोक्त, भारतीय मुसलमान इतिहास का सन्दर्भ भाग–1, पृष्ठ 381, 385.
26- वही, पृष्ठ 381–386.